डॉ॰ सुनीता कुमारी
सहायक प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
सोगरा कॉलेज, बिहारशरीफ,
नालंदा।

विषय : हिन्दी (आनर्स)
बी॰ ए॰ - पार्ट - 1

भाषा का अभिप्राय

'भाषा' संस्कृत के 'भाष्' धातु से बना (निर्मित) हुआ है; जिसका अर्थ 'कहना' या फिर 'बोलना' होता है। अर्थात् भाषा का संबंध अभिव्यक्ति से है। अतः भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम है। व्यापक स्वरूप में प्राणिजगत में सभी प्राणी अपनी भावाभिव्यक्ति हेतु माध्यम के रूप में भाषा का प्रयोग करते हैं, लेकिन यहाँ भाषा का तात्पर्य मनुष्य की भाषा से है। महान भाषाविज्ञानी पाणिनी ने कहा है "व्यक्तवाचं समुच्चारणे" (पाणिनि, अष्टाध्यायी, 1/3/48) अर्थात् "भाषा का प्रयोग मनुष्य के उच्चारण अवयवों द्वारा सप्रयास उच्चरित ध्वनि संकेत जो अर्थवान हो, भाषा है। यहाँ मात्र अर्थवान उच्चरित ध्वनि संकेतों को भाषा कहा गया है। लिखित रूप को भाषा का निकृष्ट रूप स्वीकार किया गया है। लेकिन जैसे ही साहित्य की बात आती है भाषा अपने उच्चरित सीमा को लाँघ लिखित रूप में विस्तार पा जाती है। अतः यह कहा जा सकता कि भाषा का तात्पर्य मनुष्य की उच्चरित, स्पष्ट

Scanned with CamScanner

एवं अर्थवान ध्वनि-संकेतों की प्रतीकात्मक यादृच्छिक व्यवस्था है जिसके द्वारा वे आपस में संवाद या फिर विचार विनिमय कर एक दूसरे को प्रभावित या फिर संतुष्ट कर पाते हैं।

भारतीय भाषा-परिवार एवं उनकी भाषाएँ :

भारत में दो भाषा परिवार है

(1) आर्यभाषा परिवार (भारोपिय भाषा-परिवार),

(2) द्रविड़ भाषा परिवार

आर्यभाषा परिवार का संबंध पश्चिमोत्तर तथा मध्य-प्रदेशों में फैली भाषाओं से है; जबकि द्रविड़ भाषा-परिवार का संबंध देश के दक्षिण में फैली भाषाओं से है।

हिन्दी-भाषा का उद्भव और विकास :

हिन्दी आर्यभाषा परिवार या फिर भारोपिय भाषा परिवार की सबसे प्राचीनतम भाषा संस्कृत से विकसित हुई है। भारत में प्रचलित आर्य भाषाओं के तीन रूप प्राप्त होते हैं जिसे तीन कालखण्डों में विभक्त किया जा सकता है

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ (1500 ई० पू० से 500 ई० पू० तक)
2. मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएँ (500 ई० पू० से 1000 ई० तक)
3. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ (1000 ई० से अब तक)

Scanned with CamScanner

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएँ (1500 ई० पू० से 500 ई० पू० तक):

प्राचीन आर्यभाषाओं में संस्कृत सबसे प्राचीन भाषा है, जिसके दो रूप हैं —

(क) वैदिक संस्कृत तथा

(ख) लौकिक संस्कृत

वेदसम्मत भाषा प्राचीन आर्यभाषाओं में वैदिक-संस्कृत तथा कालान्तर में लोक-सम्मत भाषा लौकिक संस्कृत कहलाई और फिर इन्हीं लोकसम्मत लौकिक-भाषाओं (जन या समाज भाषा) से साहित्य का निर्माण होता चला गया।

वैदिक संस्कृत के साहित्य : चारों वेद, ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद्

लौकिक ~~साहित्य~~ संस्कृत के साहित्य : रामायण, महाभारत आदि।

2. मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएं (500 ई० पू० से 1000 ई० तक)

मध्यकालीन आर्यभाषाओं में पालि, प्राकृत और अपभ्रंश हैं।

पालि का संबंध बौद्ध धर्म या फिर बौद्धों की भाषा से है, जिसमें बौद्ध धर्म एवं दर्शन संबंधी महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना की गई। भगवान बुद्ध के उपदेशों का संकलन, 'त्रिपिटक' इसी भाषा में है।

साहित्यिक भाषा के रूप में पालि प्रतिष्ठित हो जाने के बाद लोक या फिर आम फहम् की भाषा की आवश्यकता और अनिवार्यता ने प्राकृत को जन्म दिया। अत: प्राकृत बोलचाल की भाषा बनी।

Scanned with CamScanner

जैन साहित्य की रचना प्राकृत में ही संभव हो पायी। प्राकृत के विविध रूप हैं:

(क) मगध, गया तथा पटना के आसपास फैली हुई तथा व्यवहृत प्राकृत को 'मागधी प्राकृत' कहते हैं।

(ख) अयोध्या के आसपास बोली जानेवाली प्राकृत को 'अर्द्धमागधी' कहते हैं।

(ग) दक्षिण और महाराष्ट्र में बोली जानेवाली प्राकृत को 'महाराष्ट्री-प्राकृत' कहते हैं।

(घ) उत्तर पश्चिम या फिर कश्मीर में व्यवहृत बोली को पैशाची प्राकृत तथा

(ङ) मध्यदेशीय बोली या मथुरा, अलीगढ़ तथा आगरा की प्राकृत को सौरसेनी प्राकृत कही गई है। इस प्रकार हम देखते हैं कि 'प्राकृत' के पाँच रूप मिलते हैं।

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाओं में अपभ्रंश का प्रयोग 500 ई० से 1000 ई० तक मिलता है। जिस प्रकार पालि के साहित्यिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो जाने के कारण लोकभाषा के रूप में प्राकृत सामने आयी ठीक उसी प्रकार जब प्राकृत व्याकरण के नियमों में बंधकर पूर्ण साहित्यिक भाषा बन गई तो जन साधारण में अपभ्रंश

Scanned with CamScanner

के रूप में एक नवीन भाषा का प्रयोग होने लगा और कालान्तर में इस भाषा में साहित्य लिखा जाने लगा। यह भाषा अपभ्रंश कहलायी।

अपभ्रंश के रूप (भेद) :

अपभ्रंश के क्षेत्रीय रूप	कालान्तर में विकसित होनेवाली प्रमुख भाषाएँ —
(क) शौरसेनी अपभ्रंश	पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती
(ख) पैशाची	पंजाबी, लहंदा
(ग) ब्राचड़	सिन्धी
(घ) खस	पहाड़ी
(ङ.) महाराष्ट्री	मराठी
(च) अर्द्धमागधी	पूर्वी हिन्दी
(छ) मागधी	बिहारी, उड़िया, बंगला, असमिया।

अतः यह कहा जा सकता है कि हिन्दी भाषा का निर्माण निम्न रूप में हुआ है —

वैदिक संस्कृत > लौकिक संस्कृत > पालि > प्राकृत > अपभ्रंश > हिन्दी एवं अन्य आधुनिक आर्यभाषाएँ।

3. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ :

जिस अपभ्रंश को अवहठ, अवहट्ठ, अवहत्थ, देश-भाषा, देशी-भाषा जैसे शब्दों से संबोधित किया गया, कालान्तर में उसी अपभ्रंश के विविध रूपों

Scanned with CamScanner

से आधुनिक आर्यभाषाओं का निर्माण हुआ है। इनमें लहँदा, पंजाबी, सिन्धी, मराठी, बंगला, उड़िया, असमिया, सिंहली तथा हिन्दी आदि प्रमुख हैं।

भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग :

मुसलमानों के भारत आने और यहाँ के लोगों को 'हिन्दू' कहने के साथ ही इनकी (हिन्दू की) व्यवहृत भाषा को 'हिन्दुई' कहा गया। कालान्तर में इसे हिन्दवी, हिन्दुवी आदि नामों से पुकारा गया। हिन्दी शब्द का प्रयोग 'हिन्दवी' के लिए हुआ। संवत् 1300 से संवत् 1800 के बीच हिन्दी और 'हिन्दवी' दोनों का प्रयोग समान रूप से में होता रहा। तेरहवीं तथा सोलहवीं सदी में क्रमशः भारत के फारसी कवि औफी तथा जायसी ने हिन्दी के लिए 'हिन्दवी' शब्द का प्रयोग किया। फिर दक्षिण मुसलमान कवि शाही मीराजी ने स्पष्ट किया रूप से 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग किया। हिन्दुओं द्वारा व्यवहृत हिन्दी, जिसे भाखा या भाषा कहा गया, के लिए हिन्दवी का प्रयोग होता रहा। यह हिन्दवी भारतीय जनोन्मुखी या फिर जनसम्पृक्त लोकभाषा थी जिसमें अरबी-

Scanned with CamScanner

फारसी के शब्दों का प्रभाव बहुत कम था। यही कारण है कि प्रसिद्ध इतिहासकार गार्सां द - तासी ने अपने इतिहास ग्रंथ में हिन्दुस्तानी (हिन्दुस्तानी) का प्रयोग उर्दू के लिए और हिन्दुई (हिन्दवी) का प्रयोग हिन्दी के लिए किया।

'हिन्दी' शब्द की व्युत्पत्ति :

'स' संस्कृत की ध्वनि है जिसका फारसी में 'ह' हो जाता है। मुसलमान सर्वप्रथम सिन्ध में आये और उन्होंने सिन्धु को 'हिन्दु' और सिन्धी को 'हिन्दी' कहना शुरु किया।

'हिन्दी' शब्द का इतिहास बहुत ही प्राचीन है। छठी शताब्दी के पूर्व में ही 'ईरान' में 'जबाने - हिन्दी' का प्रयोग भारत की भाषाओं के लिए होता रहा। मुसलमानों ने मध्य - भारत की लोकभाषा या फिर बोलियों के लिए 'जबान ए हिन्दी', 'हिन्दी जबान' या फिर 'हिन्दी' नाम का प्रयोग किया। सम्वत् 1800 के आसपास हिन्दी शब्द उर्दू और रेख्ता के लिए प्रचलित था। आधुनिक भारत में अंग्रेजों ने हिन्दी शब्द का प्रयोग करना शुरु किया।

इस प्रकार हिन्दी 'सिन्धी' शब्द से

Scanned with CamScanner

बदलती हुई आज खड़ी बोली हिन्दी नाम से प्रतिष्ठित, सर्वमान्य एवं प्रसिद्धी प्राप्त कर विकास की नयी संभावनाओं की तलाश में अग्रसर मंगलग्रह की भाषा बनने के नजदीक है।

हिन्दी के भेद :

पूर्वी हिन्दी — अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी

पश्चिमी हिन्दी — खड़ी बोली हिन्दी, (कौरवी), बाँगरु (हरियाणवी), ब्रजबोली (ब्रजभाषा), कन्नौजी और बुन्देली।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि 'हिंदी' के स्वरूप निर्धारण और विस्तार (फैलाव) में भोजपुरी, मैथिली, बिहारी, राजस्थानी, पहाड़ी, मराठी आदि बोलियों तथा भाषाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान है। वहीं अन्य आधुनिक

Scanned with CamScanner

विषय : हिन्दी (आनर्स), बी. ए. पार्ट - (2)

प्रयोगवाद की विशेषताएँ एवं प्रवृत्तियाँ :

प्रगतिवाद काव्य की प्रतिक्रियास्वरूप कवियों ने एक नयी प्रकार की कविता को जन्म दिया, जिसे प्रयोगवाद की संज्ञा दी गयी है। काव्य में अनेक प्रकार के नए-नए कलात्मक प्रयोग किए गए, इसी-लिए इस कविता को प्रयोगवाद कविता कहा गया। प्रयोगवादी काव्य में शैलीगत तथा व्यंजनागत नवीन प्रयोगों की प्रधानता होती है। हिन्दी में प्रयोग-वादी कविता का जन्म, साधारणतः सन् 1943 ई० हीरानन्द सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' द्वारा संपादित 'तारसप्तक' कविता संग्रह से माना जाता है। 'अज्ञेय' द्वारा संपादित 'प्रतीक' नामक मासिक पत्रिका में प्रयोगवादी कवि एवं कविताओं को प्रश्रय दिया गया। 'पाटल', 'दृष्टिकोण', तथा 'न्याय-पथ' आदि प्रगतिशील पत्रिकाओं में भी ऐसी प्रयोगधर्मी कविताओं के दर्शन होते रहे।

प्रयोगवाद क्या है ?

प्रयोगवाद को कुछ तो छायावाद के प्रतिक्रिया स्वरूप मानते हैं, तो कुछ प्रगतिवाद के प्रतिक्रिया

में लिखी गयी प्रयोगधर्मी काव्य-सृजन को प्रयोगवाद कहा।

प्रयोगवाद पूंजीवादियों द्वारा समर्थित एक ऐसी काव्यधारा है जो प्राणपण से प्रगतिवाद का विरोध करती है। प्रगतिवाद से पूंजीपतियों को भय था। जब पूंजीपतियों के बदनाम एवं विरोध से भी यह प्रगति की धारा न रुकी तब उन्होंने ऐसे मध्यवर्गीय शहरी कलाकारों को उद्भूत किया और उनसे ऐसी काव्यधारा का सृजन कराया जिसमें हमारी ऐसी समस्याओं को प्रधानता दी गयी जिनसे हमारी ऐसी समस्याओं को प्रधानता दी गयी जिनसे हमारी दैनिक समस्याओं का कोई दूर-दूर का संबंध नहीं था। कलाकारों का सारा ध्यान और उनकी शक्ति शैली (टेकनिक) के नवीन प्रयोगों की तरफ लगा दी गई। इनसे ऐसे साहित्य की रचना हुई जो जनवादी हो चाहे न हो परन्तु विलक्षण, अद्भूत और ऐसी अवश्य हो जिसे पढ़कर पाठक आश्चर्य-चकित हो जाए। पाठक भले समझ पावें अथवा

Scanned with CamScanner

नहीं, कहें की यह नये संवेदनात्मक स्वरूप की कविता है ——

" अगर कहीं मैं तोता होता।
तो क्या होता
तो क्या होता,
तोता तोता तोता।"

यदि छायावाद, प्रसादजी के शब्दों में– 'वेदना के आधार पर स्वानुभूति-मयी अभिव्यक्ति है'! तो डॉ० कमलेश्वर शर्मा जी के शब्दों में 'प्रयोगवाद बहु-स्तरीय सामाजिक दुराचार के आधार पर स्वविचारमयी अभिव्यक्ति।' छायावादी कविता में लक्षणा शक्ति की प्रधानता है तो प्रयोगवादी कविताओं में व्यंजना-शक्ति की। प्रयोगवाद सतत् अन्वेषी काव्य-सृजन की एक प्रक्रिया है, जिसमें प्रयोग कभी पूर्ण नहीं होता, वह सदैव अपूर्ण ही रहता है। अज्ञेय जी के अनुसार "प्रयोग~~वाद~~ कोई वाद नहीं है, और हमें प्रयोगवादी कहना उतना ही निरर्थक है जितना हमें कवितावादी कहना।.... प्रयोगवादी कवि किसी स्कूल के नहीं हैं। अभी राही हैं, राही भी नहीं, राह के अन्वेषी' जहाँ वे ——

"वन गुहा कुंज मरु अंचल में
खोज रहा अपना विहान।"

लक्ष्मीकांत वर्मा के अनुसार " प्रयोगवाद ज्ञात

से अज्ञात की ओर बढ़ने की बौद्धिक जागरूकता है। यह जागरूकता व्यक्ति सत्य और व्यापक सत्य के स्तरों पर व्यक्ति की अनुभूति की सार्थकता को भी महत्त्वपूर्ण मानती है। प्रयोगवाद ~~व्यक्ति-अनुभूति की सार्थकता को भी महत्त्वपूर्ण मानती है।~~ व्यक्ति को मानते हुए समष्टि की संपूर्णता तक पहुँचने का प्रयास है।"

प्रयोगवाद की प्रेरक भावभूमि: आलोच्य काव्यधारा की प्रेरणा का स्रोत प्रतीकवाद, बिम्बवाद, दादावाद, अतियथार्थवाद, अस्तित्ववाद तथा फ्रायड-वाद जैसे विचारधारा रहे हैं। प्रयोगवाद, प्रपद्य-वाद तथा नई कविता - इन तीनों ने उपर्युक्त सभी पाश्चात्य चिंतन-दर्शन से जीवनी-शक्ति ग्रहण किया है। इस काव्यधारा के कवियों बॉदलेअर (Baudelaire), आर्थर रिम्बो (Arthur Rimbau), पाल वेलरी (Paul Valary) जैसे प्रतीक-वादियों, टी० ई० ह्यूम (T.E. Hulme), एजरा पाउण्ड (Ezra Pound), एफ० एस० फ्लिण्ट (F.S. Flint) आदि बिम्बवादियों, जीन आर्प तथा अर्न्स्ट मामर्न आदि जैसे दादावादियों, आन्द्रे ब्रेटन (Andre Breton)

जैसे अतियथार्थ-वादियों, सॉरेन किर्केगार्ड (Soren Kirkequard, 1813-1835), एफ० नीत्से (F. Nietzsche, 1844-1900), मार्टिन हैडगर (Martin Heidgger, 1899) तथा जे० पी० सार्त्र (J.P. Sartre, 1905) जैसे अस्तित्व-वादियों तथा सिगमंड फ्रायड (1856-1939) जैसे फ्रायडवादियों के विचारों से प्रभावित होकर हिन्दी कविता को नयी भंगिमा प्रदान की।

प्रयोगवादियों, नई कविता तथा नकेनवादियों (प्रपद्यवाद) के कवियों ने — 1. प्रतीकवादियों की वैयक्तिकता, असामाजिकता, निराशावादिता, रुग्णता, जैसी ह्रासोन्मुखी (Decadents) प्रवृत्तियों को ग्रहण किया, 2. नये प्रतीकों को, बिम्बवादियों के (1) नये विषयों, नई वस्तुओं, नये रूपों, नयी शैली विधान के साथ-साथ नयी भाषा का प्रयोग को, (2) स्पष्ट निरीक्षण, यथावत् चित्रण एवं बिम्बों के यथार्थ विधान की पद्धति तथा (3) विषय-वस्तु की उपेक्षा करते हुए दैनिक साधारण जीवन की अतिसाधारण बातों की अभिव्यंजना भाव को, फ्रायड के मनोविज्ञान संबंधी अवधारणाओं को स्वीकार करते हुए वासनाओं, गुप्त भावनाओं के साथ-साथ अचेतन कुण्ठाओं की अभिव्यक्ति के

Scanned with CamScanner

साथ-साथ अस्तित्ववादी जीवन-दर्शन के प्रभाव से प्रेरित होकर में क्षणवाद, निराशावाद, लघुमानव की प्रतिष्ठा तथा आकांक्षा-शून्यता आदि को अपने काव्य का विषय बनाया।

प्रयोगवाद के महत्वपूर्ण कवि: अज्ञेय, गिरिजा कुमार माथुर, प्रभाकर माचवे, नरेश कुमार मेहता, धर्मवीर भारती, नेमिचंद जैन आदि इस काव्य-परंपरा के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं।

महत्वपूर्ण रचनाएँ: मंजरी, नाश और निर्माण, वनपांखी सुनो, अंधायुग, सात गीत वर्ष, आदि।

प्रयोगवाद की विशेषताएँ: प्रयोगवाद की निम्नलिखित काव्यगत प्रवृतियाँ हैं —

1. रचनायें पूरी तरह काव्य की चौहद्दी में नहीं आती।
2. प्रयोगवादी रचनाएँ वैचित्र्यपूर्ण हैं।
3. प्रयोगवादी रचनाएँ भयग्रस्त प्राणियों का क्रंदन है।
4. प्रयोगवाद कला कला के लिए (Art shake for Art) का प्रचारक है।
5. प्रयोगवादी विषय-वस्तु निरर्थक और निरुद्देश्य है। जैसे —

"गिर गया नभ, उभर आये मेघ काले।"

6. भावातिरेक तथा काल्पनिकता के स्थान पर मनोविश्लेषण तथा बुद्धिवादिता का प्रधानता।

7. नये प्रतीकों की योजना, नवीन उपमानों का का प्रयोग, यथा –

(i) कोकाकोला जैसा दुल्हन बुझा - बुझा - सा, लाल - लाल - सा

(ii) अंतिम जलती तीली - सी हंसी

(iii) कोंपली ओठ

(iv) प्यार का बल्ब फ्यूज हो गया

(v) बिजली के स्टोव - सी एकदम सुर्ख हो जाती है

(vi) जिन्दगी बम्बई मेल की रफ्तार

8. नवीन राहों का अन्वेषी
"हम अन्वेषी हैं राहों के।"

9. रूप के प्रति मोह "इन फिरोजी होठों पर,
बर्बाद मेरी जिन्दगी"।

10. दमित वासना के उभरे हुए चित्र

"एक तीक्ष्ण अपाङ्ग से कविता उत्पन्न हो जाती है
एक चुम्बन में प्रणय फलीभूत हो जाता है।
फूल लाया हूँ कमल के,

Scanned with CamScanner

क्या करें इनका ?
पसारो आप आंचल,
छोड़ दूं,
हो जाय जी हल्का।"

11. प्रयोगवादी काव्यों में रागप्रवणता और संवेदनशीलता का अभाव तथा अतिशय व्यावहारिकता, बौद्धिकता तथा तार्किकता का प्रबल आग्रह है।

12. छायावाद का नैराश्य राष्ट्रीय जातीय नैराश्य का परिणाम था, प्रयोगवाद की अतिशय निराशावादिता आज के शिक्षित और बौद्धिक मध्यवर्ग की वैयक्तिक हताशा का पर्याय है।

13. प्रयोगवाद यांत्रिकयुग की अतिशय शुष्कता और तार्किकता के प्रभाव स्वरूप शैली की दृष्टि से गलदश्रु भावुकता का परित्याग कर ठोस गद्यात्मकता अपनाने के लिए विवश है।

14. विषयगत दृष्टि से प्रयोग-वाद अभिजात्य के बंधन से मुक्त हो - स्थूल और सूक्ष्म, संस्कृत-असंस्कृत; कुसंस्कृत, लघु और महान - प्रत्येक प्रकार के विषय को काव्यरूप में ग्रहण किया है। उदाहरणार्थ - चाय की प्याली, चूड़ी का

Scanned with CamScanner

टुकड़ा, आयरलैंड, ऑस्ट्रेलिया, मंगोलिया, मूत्रविलीन मृत्तिका के वृत्त में तीन टांगों पर खड़ा नतग्रीव धैर्यधन गदहा।"

15. प्रयोगवादी कवि मुक्तवृत्त छंद शैली के समर्थक हैं।

16. शब्दों का अपव्यय प्रयोगवादी कवियों ने सबसे ज्यादा किया है।

डॉ० कामेश्वर शर्मा लिखते हैं – "इनके समालोचनादर्शों और भाषा-संस्कार ने भयंकर फूहड़ का रूप लिया, अस्तित्व से पलायन ने कुसंस्कार और विकृत मनोविज्ञान दिये तथा पराजय-भावना ने असंयमित भोग के पंक में ला पटका।"

अंततः कहा जा सकता है कि 'नई-कविता' उत्कर्ष है तो प्रयोगवाद उस उत्कर्ष का प्रारंभ।